ISSN No. 2231-0045 VOL.II* ISSUE-I*AUGUST-2013
Periodic Research

वैदिक शाश्वत मूल्य परित्याग एवं दुष्प्रभाव

सारांश

सारे वि"व का गुरू कहलाने वाला भारत आज अपने शा"वत मूल्यों (नैतिक मूल्यों) के पतन से चारित्रिक पतन की ओर अग्रसर है। चाहे राष्टोय चरित्र की, राजनैतिक चरित्र की या व्यक्तिगत चरित्र की बात हो, वैदिक मूल्यों के विस्मरण का दुष्प्रभाव सर्वत्र परिलक्षित हो रहा है। जो दे"ा अपनी प्राचीन गौरवमयी वैदिक संस्कृति व सभ्यता के कारण सम्पूर्ण संसार में वि"वगुरू की उपाधि से सु"ाोभित था तथा जिन शा"वत मूल्यों, आद"ार्ों व सिद्धान्तों के परिपालन से भारत की वि"व में जो पहचान थी आज वे मूल्य लुप्त होते नजर आ रहे हैं। केवल मात्र मूल्यों के अव"ोष दृष्टिगोचर होते हैं। भारतीय वैदिक संस्कृति को मानवीय शा"वत मूल्यों की जननी कहा जाये तो कोई अति"ायोक्ति नहीं होगी लेकिन विगत कुछ वर्षों से इन मूल्यों में जो पतन दिखाई दे रहा है इसक लिये पा"चात्य संस्कृति का अन्धानुकरण, संयुक्त परिवार प्रणाली का विघटन, f"ाक्षा में वैदिक मूल्यों की उपेक्षा आदि कारण उत्तरदायी हैं। वर्तमान में आव"यकता इस बात की है कि वर्षों से विकृत हुई मानसिकता के परिवर्तन तथा गलत मान्यताओं व अवधारणाओं के बदलने को है। मूल्यपरक f"ाक्षा तथा सद्विचारों से ही जागृति व क्रान्ति उत्पन्न की जा सकती है। पुनः इस भारत भू पर वैदिक शा"वत मूल्यों को प्रतिष्ठित कर, दे"ा के खोये हुये गौरव और गरिमा को प्राप्त करने के लिये वेद के आदे"ा व संदे"ा को चरित्तार्थ करें ''मनुर्भव'' ''कृण्वन्तोवि"वमार्यम्'' अर्थात् मनन"ाील व श्रेष्ठ मानव बनकर सभी को श्रेष्ठ बनायें तभी दे"ा समृद्ध बन सकता है तथा स्वर्णिम अतीत की उपस्थिति अब भी हो सकती है।

सत्यवती
व्याख्याता –संस्कृत
माँ जालपा देवी राजकीय
महाविद्यालय तारानगर (चूरू)

मुख्य शब्द : शाश्वत मूल्य, भारतीय संस्कृति, वेद विद्या

प्रस्तावना

वेद भारतीय संस्कृति की आत्मा हैं। ये मानव जाति के लिये प्रकाश स्तम्भ हैं। विश्व को संस्कृति का ज्ञान देने का श्रेय वेदों को जाता है। वेद ही विश्व शान्ति, विश्व बन्धुत्व और विश्व कल्याण के प्रथम उद्घोषक हैं। वेद का ही उद्घोष है '' मनुर्भव जनया दैव्यं जनम् '' अर्थात् मनुष्य बन और देवों को उत्पन्न कर अर्थात् हे प्राणी तू मानव बन। वेद तथाकथित धर्म, लिंग, जाति, मत, पन्थ और सम्प्रदाय आदि से दूर सर्व प्राणिमात्र की कल्याण की कामना करते हैं। वेदों मे ज्ञान–विज्ञान की सभी विचार धाराओं का सूत्र रूप में उल्लेख किया गया है अतः वेद ज्ञान के अक्षय भण्डार हैं। ये भारतीय साहित्य के ही नहीं अपितु विश्व साहित्य के प्राचीनतम ग्रन्थ हैं। वेद हमारी संस्कृति और दर्शन के मूल स्रोत हैं तथा अज्ञान अंधकार में पड़े हुए मनुष्यों को प्रकाश की ओर ले जाने वाले ज्ञान के दीपक हैं। वेदों में निहित शाश्वत मूल्य मानव के पथ प्रदर्शक हैं। मानव के कर्त्तव्य पर प्रकाश डालते हुए ऋग्वेद का ऋषि कहता है '' पुमांसं परिपात विश्वतः ''[1] अर्थात् मनुष्य परस्पर सभी की सभी प्रकार से रक्षा करें। सम्पूर्ण मानव जाति की रक्षा की बात मनुष्य से इतर प्राणि नहीं सोच सकता। हित की बुद्धि केवल और केवल मनुष्य के पास है जहां भी जीवन के मूल में शाश्वत मूल्य या वैदिक सिद्धान्त होंगे और जीवन वैदिक मूल्यों से नियन्त्रित होगा वहां पर चारों ओर मानवता, मनुष्यता और परस्पर सौहार्द का वातावरण होगा। मानवता ही मानव का धर्म है जिसमें छोटा–बड़ा, ऊंच–नीच का भाव लेश मात्र भी न हो और प्रत्येक प्राणी परस्पर उन्नति चाहता हो। ऋग्वेद में वर्णन प्राप्त होता है कि '' मनुष्यों में कोई बड़ा नहीं कोई छोटा नहीं सभी समान हैं तथा सभी मिलकर ऐश्वर्य प्राप्ति के लिये आगे बढ़ें और उन्नति करें ''[2] परन्तु विडम्बना यह है कि आज मानव अनेक दुर्गुणों व दुर्व्यसनों को अपनाकर मानव के स्थान पर दानव का रूप ग्रहण कर रहा है। मानव ने ही मानव के बीच में धर्म, लिंग, जाति, वर्ग और धन के बल पर अनेक दीवारें खड़ी कर दी हैं। वर्तमान में चारों ओर भ्रष्टाचार, हिंसा, लूटपाट, बलात्कार, अराजकता तथा आतंक का ताण्डव हो रहा है। कोई ऐसा मार्ग दिखाई नहीं दे रहा जिस पर चल कर भय, भूख और भ्रष्टाचार से मुक्त हो सकें। वेदों के शाश्वत मूल्य ही हमारा पथ प्रशस्त करते हुए दिखाई देते हैं। ऋग्वेद में समस्त प्राणि मात्र के कल्याण की कामना करते हुए मानवों से आह्वान किया है कि '' हम प्रतिदिन कल्याण मार्ग का अनुसरण करें जैसे सूर्य और चन्द्रमा बिना किसी विश्राम के जगत् का

कल्याण करते हैं।''[3] परन्तु जब–जब वैदिक मूल्यों में अज्ञान और प्रमाद ने स्थान बना लिया तब से अनैतिकता, अनाचार, बेईमानी, रिश्वतखोरी, कत्तव्यहीनता तथा अज्ञान का आवरण छा जाने से पतन दर पतन होता गया। वेदों की आज्ञाओं का उल्लंघन करने से समाज में नैतिक व्यवस्था खण्डित होती गई। वर्तमान में भ्रष्टाचार, आतंकवाद, हिंसा मूल्यों के पतन का ही दुष्परिणाम है। मनुष्य येन केन प्रकारेण अनुचित तरीके अपनाकर धन बटोरना चाहता है।

इसी के कारण भ्रष्टाचार की समस्या बेहद विकट हुई है। भ्रष्टाचार ने देश को खोखला बना दिया है। जब लोगों का लोकतान्त्रिक प्रक्रिया पर विश्वास नही रहता, समता पर विश्वास नहीं होता,

मानव मर्यादा पर विश्वास नहीं होता तब भ्रष्टाचार पनपता है। यही भ्रष्टाचार की बुनियाद है। आज हमने भ्रष्टाचार को शिष्टाचार का अमली जामा पहनाकर भ्रष्टाचार का भी दर्शन बना बैठे। रिश्वत के बदले में होने वाले कार्य को सिस्टम का हिस्सा मान बैठे। इसके पीछे हमारी मान्यताएं एवं अवधारणाएं भी ऐसी ही बन चुकी हैं जो भ्रष्टाचार के दर्शन को इंगित करती हैं। आज हम दूसरे की वस्तु या धन पर गिद्ध की तरह दृष्टि लगाये बैठे हैं। जबकी यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के प्रथम मन्त्र में मनुष्य को चेताया गया है कि ''हे मानव तू किसी के धन का तनिक भी लालच मत कर, उस ईश्वर प्रदत्त धन का त्याग भाव से उपभोग कर''[4] अर्थात् जो धन तूने पुरूषार्थ से अर्जित किया है उसमें से भी यथा शक्ति दान कर। भारतीय संस्कृति त्याग की संस्कृति रही है लूट की नहीं। इतिहास में त्याग के बहुत उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं। त्याग रूपी वैदिक मूल्य के विस्मरण का ही दुष्परिणाम सर्वत्र परिलक्षित हो रहा है। वैदिक शाश्वत मूल्यों का भाव ही प्रकारान्तर से योग दर्शन के आठ अंगों में परिलक्षित होता है। इन मूल्यों के अनुरूप उत्तम जीवन व्यतीत करने के जो उद्देश्य, लक्ष्य हमारे थे उनको हमारी बढ़ती परिग्रह की आकांक्षा ने (योग के प्रथम अंग) यम का पांचवा अंग (अपरिग्रह) की मूल थीम को ही मिटाने में भरपूर सहयोग किया है। जब समाज आवश्यकता पर आधारित न हो कर लोभ पर आधारित होता है तब कठिनाई यह होती है कि आवश्यकता का तो अंत हो जाता है परन्तु लोभ का कभी अन्त नहीं होता। अपरिग्रह तथा त्याग का जीवन में पालन न होने से ही भ्रष्टाचार रूपी समस्या ने अपनी जड़ें जमा ली हैं। कठोर परिश्रम से धन कमाना कष्ट साध्य दिखाई देता है। वेद में मानव को बार–बार सावधान किया गया है कि ''जो व्यक्ति अकेला (स्वयं) खाता है या भोग करता है वह अन्न न खाकर केवल मात्र पाप को खाता है।''[5] वेद की इसी ऋचा का भाव भगवद् गीता के तृतीय अध्याय मे प्राप्त होता है कि '' जो पापी स्वयं के लिये पकाते हैं वे वस्तुतः पाप ही खाते हैं।''[6] जब समाज में निर्दोष व्यक्तियों के अधिकार छीने जाते हैं जंगलराज की भांति बलवान निर्बल को सताता है तब समाज में हिंसा तथा अशान्ति को बढ़ावा मिलता है। हिंसा व अशान्ति क कारण सारा विश्व त्राहि–त्राहि कर रहा है। सारा संसार अषान्ति की ज्वाला की लपटों में झुलस रहा है। कहीं कहीं तो इस हिंसा और अशान्ति की अग्नि ने दावानल का रूप धारण किया हुआ है जिसमें मनुष्यों की संवेदनाएं जलकर राख हो रहा हैं। अशान्ति होने पर समाज में प्रसन्नता का वातावरण नहीं रहता। अशान्ति व हिंसा के कारण भिन्न–भिन्न हो सकते हैं परन्तु इतना निश्चित है कि इस समस्या ने मानव जगत् को संत्रस्त कर रखा है। वेद हिंसा का निषेध करता हुआ कहता है ''हे मानव तू मनुष्य और इतर प्राणियों की हिंसा मत कर।''[7]

अथर्ववेद म तो परस्पर सद्भाव बनाये रखने की उद्घोषणा सुनाई देती है ''भगवन् आपकी महती कृपा से मैं सभी मानवों के प्रति चाहे मैं उनसे परिचित हूं अथवा नहीं सद्भाव रखूं।''[8] इतना ही नहीं वेद का मानवीय चिन्तन प्रशंसनीय एवं नितान्त ग्राह्य है। ऋग्वेद का ऋषि कहता है कि ''दुष्ट दलन में (दुष्टों के विनाश में) अपने मन को भद्र ही रखना, मन में कभी किसी के प्रति कोई दुर्भाव न आने पाये।''[9] वेदों की कितनी उदात्त भावना और संदेश हैं कि हम व्यक्ति से द्वेष न करके उसकी बुराई से द्वेष करें। वेदों में ही विश्व में शांति स्थापित करने और परस्पर भ्रातृत्व भावना बढ़ाने की

प्रेरणा प्राप्त होती हैं। वेदों की गोद में पली भारतीय संस्कृति सदा से ही विश्व शान्ति की उपासक रही है। वेद में वर्णन प्राप्त होता है ''भाई–भाई से द्वेष न करे, बहन–बहन से द्वेष न करे।''[10] ऋग्वेद का संगठन सूक्त जो एकता सूक्त के नाम से भी प्रसिद्ध है में वर्णन प्राप्त होता है सभी के मन एक हों, विचार एक हों, सभा, समिति एक हों।'11 अथर्ववेद में वर्णन प्राप्त होता है कि '' हे मनुष्यों ! तुम सहृदय और अनुकूल मन वाले बनो, परस्पर द्वेष न करो, एक दूसरे से ऐसी प्रीति रखो जैसे गौ अपने नवजात बछड़े के प्रति रखती है।''[12] वेदों का संदेश है कि व्यक्तियों में, समाज में और राष्ट्रों के मध्य सर्वत्र भ्रातृभाव, प्रेमभाव विकसित हो। यजुर्वेद के एक मन्त्र में कहा गया है कि '' सभी व्यक्ति मुझे मित्र की दृष्टि से देखें, मैं भी सभी व्यक्तियों को मित्र की दृष्टि से देखूं और समाज में हम सभी परस्पर मित्र की दृष्टि से देखें।''[13] इससे भी उदात्त भाव यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के मन्त्र संख्या 6 व 7 में प्राप्त होता है। ''सभी प्राणियों को अपनी आत्मा में देखता हूं और सबकी आत्मा में अपने को दखता हूं ऐसी अनुपम अवस्था के प्राप्त होने पर कैसा शोक (दुःख) और कैसा मोह ?''[14]

अथर्ववेद में वर्णन प्राप्त होता है कि यदि शाश्वत मूल्यों के मानने वाले धर्मात्मा पुरूषों के सत्परामर्श नहीं सुने जाते ''और जहां वेद विद्या के जानने वाले नीति कुशल वेद वेत्ताओं का निरादर होता है वह राज्य उसी प्रकार नष्ट हो जाता है जिस प्रकार जल में टूटी नाव नष्ट हो जाती है।''[15] ऐसा ही भाव अथर्ववेद के 5वें काण्ड के 18वें सूक्त में प्राप्त होता है। जैसे कैंचुली से निकल सर्पिणी दुष्ट विषैली होती है ठीक वैसे अविद्या के फैलने से नष्ट हुई वेद विद्या (वैदिक मूल्यो) से सभी और विपत्ति फैलती है। आज के मानव में सहनशीलता का अभाव नजर आता है। थोड़ा सा कष्ट देखकर घबराकर धैर्य खो बैठता है। धैर्यहीन हो कर आत्म हत्या करने पर उतारू हो

जाता है तथा अपने जीवन को कीड़े–मकोड़ों की भांति व्यर्थ में ही गंवा बैठता है। सहनशीलता रूपी (मूल्य) गुण के अभाव में तथा आज की भागमभाग व तनावपूर्ण जिन्दगी में वेद के आदेशों का उल्लंघन कर स्वल्पायु में ही मृत्यु को गले लगा रहा है। जबकी यजुर्वेद में आत्महत्या करने वाले को महापापी तथा अत्यन्त निकृष्ट योनी में गिरने वाला बताया गया है।[16] वहीं वेद में शतायु (दीर्घायु) होने के प्रमाण प्राप्त हाते हैं। यजुर्वेद के मन्त्र में ही वर्णन प्राप्त होता है कि ''हे मानव ! तेरे नेत्र, श्रोत्र और वाणी में इतना बल हो कि सौ वर्षों तक सुख पूर्वक जीवन व्यतीत कर सकें। इतना ही नहीं उससे भी अधिक लम्बी आयु वाला बने।''[17] लम्बी आयु तथा बलिष्ठ शरीर बनाने में ब्रह्मचर्य के पालन की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। आज की अस्त–व्यस्त व असंयमित, कर्तव्यविहीन जीवन शैली ने भी व्यक्ति को सक्षम बनाने की अपेक्षा अक्षम ही बना दिया। कहां तो ब्रह्ममूहूर्त में ऊठ कर जीवन जीने का विधान प्राप्त होता है और ब्रह्मचर्य के पालन की अपार महिमा बताई गई है। अथर्ववेद के ब्रह्मचर्य सूक्त में इसी का विशद वर्णन प्राप्त होता है। अथर्ववेद के एक मन्त्र में स्पष्ट कहा गया है कि ''ब्रह्मचर्य रूपी तप के द्वारा विद्वान देवगण मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर लेते हैं।''[18] चारों वेदों में मानव को स्वस्थ तथा निरोग रहने की प्रेरणा बार–बार दी गई है क्योंकि वेद मानव हित की विद्याओं तथा विज्ञानों के भण्डार हैं। वेदों में जहां भौतिक एवं लौकिक विषयों की विवेचना मिलती है वहां दार्शनिक तथा आध्यत्मिक प्रश्नों का समाधान भी मिलता है तथा समाज को उन्नत, सशक्त व समर्थ बनाने के सूत्र भी प्राप्त होते हैं।

ईश्वर ने मनुष्य की रचना इस प्रकार की है वह अकेला नहीं रह सकता है अतः उसे समूह व समाज की नितान्त आवष्यकता है। ऐसे व्यवस्थित समाज की जिसमें भय, भूख, भ्रष्टाचार और हिंसा आदि का नामोनिशान न हो। यम नियमों का पालन हो। ऐसे सुव्यवस्थित समाज की संकल्पना पुनः वैदिक शाश्वत मूल्यों को जीवन में आत्मसात् करने से सम्भव हो सकती है। वेद की इन शिक्षाओं व आज्ञाओं को मानव समाज अपने जीवन में चरितार्थ करलें तो सभी समस्याओ का समाधान सम्भव है। मनुष्य के विनाश का मार्ग समाप्त होकर नवीन विश्व की रचना का मार्ग प्रषस्त हो सकता है। तुच्छ स्वार्थ, संकीर्णता, अवसरवादिता और आपसी मतभेद कोई ऐसी समस्या नहीं है जिन्हें हम दूर नहीं कर सकते। सिद्धांत या मूल्य स्वयं में बहुत अच्छे और उपयोगो होते हैं परन्तु जब तक जीवन के प्रत्येक व्यवहार में क्रियात्मक रूप में अवतरित न हो जायें तब तक उनकी उपादेयता शून्य ही होती है। वर्तमान में आवष्यकता इस बात की है कि वैदिक शाश्वत मूल्यों द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को जागरूक किया जाये। सद्विचारों के माध्यम से ही विकृत हई मानसिकता को परिवर्तित किया जाये। क्योंकि विचारों से ही क्रान्ति आती है, विचारों से ही जागृति आती है। देश को स्वतंत्र करवाने के लिये प्रत्येक गांव–गांव व जन–जन में प्रसुप्त राष्ट्रीयता को जगाने के लिये विचार ही दिये गये थे। तलवार, लाठी आदि अस्त्र–शस्त्र नहीं दिये गये थे। उस वैचारिक क्रान्ति की वर्तमान में नितान्त आवश्यकता है। कब तक हम मूल्यों को बेचते रहेंगे तथा कब तक जड़ भौतिक सुविधायें चेतन का पथ भ्रष्ट करती रहेंगी। फिर से इस धरा पर शाश्वत मूल्यों को प्रतिष्ठित कर देश के खोये हुये गौरव और गरिमा को पाप्त करने के लिये वेद के आदेश को, संदेश को चरितार्थ करें '' कृण्वन्तोविश्वमार्यम् ''[19] सभी को श्रेष्ठ बनायें तभी वैदिक राष्ट्रीय प्रार्थना ''आ ब्रह्मन् ब्राह्मणों ब्रह्मवर्चसी जायताम् ..... योगक्षेमो नः कल्पताम् का संकल्प पूरा कर सकते हैं।''[20] यजुर्वेद के इस मन्त्र में राष्ट्र की सुख समृद्धि के लिए इतना व्यापक व सारपूर्ण चिन्तन दिया है कि संसार के प्रत्येक भू–भाग में रहने वाले प्राणि इसके पालन से सब प्रकार से सुखी हो सकते हैं। वेदविद्या (वैदिक मूल्य) सर्वथा कल्याणि होने से सब बुराईयों को दूर कर सकतो है तथा स्वर्णिम अतीत की उपस्थिति अब भी हो सकती है।

1. ऋग्वेद 6.75.14
2. अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सम् भ्रातरो वावृधुः सौभगाय। ऋग्वेद 5.60.5
3. स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव। ऋ. 5.51.15
4. तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्। यजु0 40–1
5. नार्यमणं पुष्यति नो सरवायं केवलाघो भवति केवलादी ऋग्वेद–10.117.6
6. भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् श्रीमद्भगवद्गीता 3.13
7. मा हिंसीः पुरूषं जगत् यजुर्वेद 16.3
8. याश्च पष्चामि याष्च न तेषु मा सुमतिं कृधि। अथर्ववेद 17.1. 17
9. भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूये। ऋग्वेद 2.26.2
10. मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत् स्वसा। अथर्ववेद 3.30. 3
11. समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्। ऋग्वेद 10.191.3
12. सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमिवः।अन्यो अन्यमभिहर्यन्त वत्सं जातमिवाध्न्या।। अथर्ववेद 3.30.1
13. दृते दृं ह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भ्तानि समीक्ष्यन्ताम्।मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।मित्रस्य चक्षुषा समीक्ष्यामहे।। यजुर्वेद 36.18
14. (क) यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति। सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते।। यजुर्वेद 40.6
    (ख) यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद् विजानतः।तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः।। यजुर्वेद 40.7
15. तद् वै राष्ट्र मा स्रवति नावं भिन्नामिवोदकम्। ब्रह्माणं यत्र हिंसन्ति तद् राष्ट्रं हन्ति दूच्छुना।। अथर्ववेद 5.19.8
16. असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसाऽऽवृताः। तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।। यजुर्वेद 40.3
17. पश्येमशरदः शतञ्जीवेमशरदः शतंश्रृणुयाम शरदः शतम्प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात्।। यजुर्वेद 36.24
18. ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नतः अथर्ववेद 11.5.19
19. ऋग्वेद 9.63.5
20. यजुर्वेद 22.22

संदर्भ पुस्तकें

1	ऋग्वेद भाय	स्वामी दयानन्द सरस्वती	प्रकाशक –परोपकारिणी सभा, अजमेर।
2	यजुर्वेद भाष्य	स्वामी दयानन्द सरस्वती	प्रकाशक – परोपकारिणी सभा, अजमेर।
3	अथर्ववेद भाष्य	क्षेमकरणदास	प्रकाशक –सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली
4	योगदर्शन भाष्य	आचार्य सत्यप्रिय	प्रकाशक – वैदिक आश्रम तिजारा, अलवर